सद्गुरु वेद वचन

"आत्मविश्वास"

भीतर जागृत होने वाली चेतना सफलता का प्रथम सोपान



आत्मविश्वास वह दिव्य शक्ति है जो मनुष्य को असाधारण उपलब्धियों तक पहुंचा देती है। यह केवल अपने ऊपर विश्वास करने का नाम नहीं, बल्कि शरीर, मन और विचारों पर विजय प्राप्त करने की जीवनशैली है।

जिसे तुम हताशा और निराशा समझते हो, वह वास्तव में कुछ और नहीं, केवल आत्मविश्वास का अभाव है। जिस दिन तुम अपने ही मित्र बन जाओगे, उस दिन संसार की कोई शक्ति तुम्हें पराजित नहीं कर पाएगी।

जो स्वयं का मित्र बन जाता है, उसके लिए सफलता केवल समय का प्रश्न रह जाती है।

आत्मविश्वास, केवल एक शब्द नहीं है, यह एक संपूर्ण जीवन दृष्टि है। शब्द स्वयं अपना अर्थ बता रहा है, आत्म का विश्वास अर्थात अपने ऊपर भरोसा करना। परन्तु आज संसार में जहां भी दृष्टि डालो, यही दिखाई देता है कि मनुष्य का अपने ऊपर विश्वास कम होता जा रहा है और दूसरों की राय पर विश्वास बढ़ता जा रहा है। इसीलिए तुम इस बात से अधिक व्याकुल होते हो कि दूसरे तुम्हारे विषय में क्या सोचते हैं, दूसरे तुम्हारी सराहना करते हैं या तुम्हारे कर्मों की उपेक्षा। यह जो निरंतर दूसरों की दृष्टि में जीने की प्रवृत्ति है, यही आत्मविश्वास के क्षय का मूल कारण है।

आत्मविश्वास का सच्चा अर्थ है यह मान लेना कि **मैं सफल अवश्य होऊंगा और जब तक सफलता न मिले, तब तक रुकूंगा नहीं।**

यह किसने निश्चित कर दिया कि सफलता तुम्हारे भाग्य में नहीं लिखी? किस जन्मपत्री ने, किस ग्रह नक्षत्र ने तुम्हें यह संदेश भेजा कि सफलता तुम्हारे लिए नहीं है? सत्य तो यह है कि **सफलता तुम्हें अवश्य मिलेगी, क्योंकि तुम उस परम पिता परमेश्वर की संतान हो, जिसके सामर्थ्य की कोई सीमा नहीं।**

समस्या यह नहीं कि ईश्वर तुम्हारी नहीं सुनता, समस्या यह है कि तुम्हें अपनी प्रार्थना ईश्वर तक पहुंचाना नहीं आता और यह कला है आत्मसंयम की कला, आत्मसम्मोहन की कला, जो अभी तुमने सीखी नहीं।

तुम सदैव यह चाहते हो कि दूसरों को अपने वश में कर लो, दूसरों को सम्मोहित कर लो, परन्तु दूसरे तभी तुम्हारे वश में आएंगे जब तुम स्वयं अपने वश में होना सीख जाओंगे।

श्रीमद् भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं –

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।

अर्थात **मनुष्य को चाहिए कि वह स्वयं अपने द्वारा अपना उद्धार करे, स्वयं को अधोगति में न ले जाए क्योंकि आत्मा ही अपना मित्र है और आत्मा ही अपना शत्रु भी।**

यह आत्मविश्वास का मूल सूत्र है। जब तुम स्वयं के मित्र बन जाते हो, तब संसार की कोई शक्ति तुम्हें पराजित नहीं कर सकती और जब तुम स्वयं के विरुद्ध खड़े हो जाते हो, तब बाहर की कोई विजय तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकती।

अब स्वयं विचार करके देखो,

प्रातः पांच बजे के कितने ही अलार्म लगाते हो, फिर भी आठ बजे तक शय्या नहीं छोड़ पाते।

प्रतिदिन यह संकल्प लेते हो कि प्रातः उठकर योगाभ्यास करूंगा, प्राणायाम करूंगा परन्तु वह प्रभात कभी नहीं आती।

प्रतिदिन सोचते हो कि आज से धूम्रपान त्याग दूंगा, गुटखा तंबाकू छोड़ दूंगा, परंतु वह दिन भी नहीं आता।

प्रतिदिन संकल्प करते हो कि स्वास्थ्यवर्धक भोजन करूंगा, बाजार का भोजन नहीं करूंगा, परन्तु सायं होते ही चटपटे भोजन के लिए मन व्याकुल हो उठता है।

जब तुम्हारा अपने ऊपर इतना भी अधिकार नहीं, जब तुम्हारा अपना शरीर ही तुम्हारे वश में नहीं, तो तुम्हारा मन तुम्हारे वश में कैसे होगा? और जिसका शरीर पर नियंत्रण नहीं, जिसका मन पर नियंत्रण नहीं, उसका आत्मविश्वास स्वतः ही डगमगाने लगता है।

आत्मविश्वास के तीन सूत्र -

अपने आत्मविश्वास को स्थिर रखने के लिए जीवन में कुछ बातें अनिवार्य हैं।

पहली बात, तुम्हारा अपने शरीर पर नियंत्रण हो। शरीर पर नियंत्रण का अर्थ है **यह जानना कि तुम क्या खा रहे हो, क्यों खा रहे हो, कब सो रहे हो, कब जाग रहे हो, कितना व्यायाम कर रहे हो।**

दूसरी बात, तुम अपने श्वास के प्रति सजग रहो। श्वास और ध्यान दोनों एक दूसरे से गुंथे हुए हैं। **जिसका ध्यान बिखरा हुआ है, उसकी श्वास भी अस्त-व्यस्त हो जाती है। क्रोध आते ही सबसे पहले श्वास उथली होने लगती है।** इसलिए अपनी श्वास के प्रति पुनः सजग होना आवश्यक है।

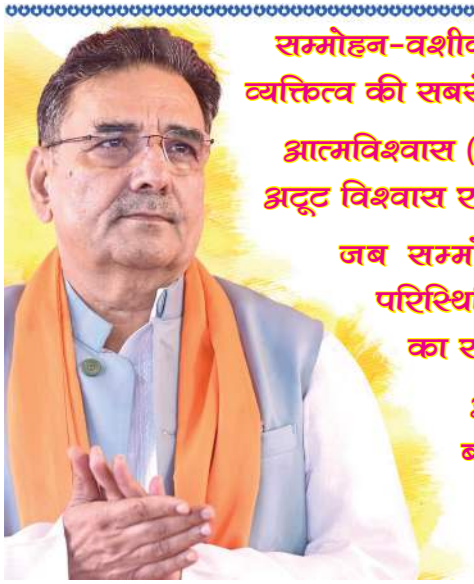
तीसरी बात, अपनी मुद्रा के प्रति, अपने चाल ढाल के प्रति, अपने खड़े होने बैठने के ढंग के प्रति सजगता रखो। **पसर कर बैठ जाना, बिना इच्छा के लेट जाना, यह सब धीरे धीरे आत्मविश्वास को शिथिल करता चला जाता है।**

देखो, तुम्हारे पास एक शरीर है, एक मस्तिष्क है और एक मन है। ये तीन साधन हैं, जिनके साथ ईश्वर ने तुम्हें इस संसार में भेजा है। इन्हीं तीनों के समन्वय से तुम महान कार्य कर सकते हो, या फिर छोटा बने रह सकते हो। यह चुनाव सर्वथा तुम्हारा है। यह चुनाव मस्तिष्क से आता है, कार्य शरीर से होता है, और कार्य की प्रेरणा मन से मिलती है। इसलिए आत्मविश्वास को समझो एक ऐसे माध्यम के रूप में, जिसके द्वारा तुम स्वयं को उस दिशा में मोड़ते हो, जहां से सफलता का मार्ग प्रारंभ होता है।

गीता में ही आगे कहा गया है -

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्।।

जिसने अपने आप को अपने ही द्वारा जीत लिया है, उसके लिए आत्मा ही मित्र है, परंतु जिसने स्वयं को नहीं जीता, उसके लिए वही आत्मा शत्रु के समान व्यवहार करती है। यही रहस्य है आत्मविश्वास के उदय और पतन का।



सम्मोहन-वशीकरण की शक्ति अर्थात् स्वयं के प्रति विश्वास मनुष्य के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी उपलब्धि है...

आत्मविश्वास (स्वयं पर विश्वास) स्वयं की क्षमताओं, मूल्यों और उद्देश्य पर अटूट विश्वास रखने की शक्ति है...

जब सम्मोहन-वशीकरण की शक्ति का विकास होता है तब परिस्थितियां चाहे कितनी भी कठिन क्यों न हों, वह उनसे संघर्ष करने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है।

आत्मविश्वासी साधक असफलताओं को अंत नहीं मानता, बल्कि उन्हें सीख और अनुभव का माध्यम समझकर आगे बढ़ता है।

- सद्गुरुदेव नन्द किशोर जी श्रीमाली

देह और वाणी में झलकता आत्मविश्वास

तुम्हारे शरीर के आसन में आत्मविश्वास का सूत्र छिपा है।

पहली, तुम्हारी पीठ सीधी होनी चाहिए, रीढ़ की हड्डी सीधी रहनी चाहिए। योग और प्राणायाम के प्रत्येक अभ्यास में रीढ़ को सीधा रखने पर विशेष बल दिया जाता है, क्योंकि मूलाधार से जो ऊर्जा उठती है, उसे ऊपर की ओर प्रवाहित करने का मार्ग सुषुम्ना है, और उस मार्ग का सीधा रहना अनिवार्य है।

शरीर की मुद्रा और आत्मविश्वास के बीच एक गहरा, अटूट संबंध है, जिसे प्राचीन योग परंपरा और आधुनिक मनोविज्ञान दोनों ही स्वीकार करते हैं। जब हम रीढ़ को सीधा रखकर, कंधों को खुला रखकर और सिर को ऊंचा उठाकर बैठते या खड़े होते हैं, तो मस्तिष्क को एक सूक्ष्म संकेत मिलता है कि हम सक्षम हैं, सुरक्षित हैं, नियंत्रण में हैं। यह केवल बाहरी दिखावा नहीं, बल्कि शरीर से मन की ओर बहने वाली एक ऊर्जा है, जिसे मनोविज्ञान में एम्बॉडिड कॉग्निशन कहा जाता है। इसके विपरीत **जब कंधे झुके होते हैं, गर्दन नीची होती है, तो शरीर तनाव, भय और असुरक्षा की भाषा बोलने लगता है, और मन धीरे धीरे उसी भावना को आत्मसात कर लेता है।**

योगशास्त्र में ताड़ासन जैसी स्थिर मुद्राओं का अभ्यास इसीलिए कराया जाता है, क्योंकि स्थिर शरीर से स्थिर चित्त उत्पन्न होता है। जब रीढ़ सीधी होती है, तो श्वास गहरी होती है, प्राण शक्ति सुचारु रूप से प्रवाहित होती है और यही प्राणशक्ति आत्मविश्वास का मूल आधार बनती है। इसलिए यदि मन कमजोर लगे, तो पहले शरीर को सीधा करना चाहिए, शेष स्वयं ठीक होने लगता है।

दूसरी बात, तुम्हारी वेशभूषा स्वच्छ, सुथरी और सुंदर होनी चाहिए। अपने रूप रंग और सज्जा पर ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि जब तुम स्वयं पर ध्यान नहीं दोगे, तो तुम्हारा अपने ऊपर विश्वास कहाँ से जन्म लेगा?

तीसरी बात, तुम्हारी वाणी में स्पष्टता और उत्साह होना चाहिए। बहुत से लोग इस प्रकार बात करते हैं मानो उन्हें विवश करके बोलने के लिए खड़ा कर दिया गया हो।

चौथी बात, तुम्हारी चाल में गंभीरता और भरोसा दोनों झलकने चाहिए, डगमगाते हुए नहीं, स्थिर होकर।

एक आत्मविश्वासी साधक की प्रार्थना –

हे ईश्वर,

मुझे वह शक्ति देना कि मेरा विश्वास स्वयं से कभी डिगे नहीं। परिस्थितियां कितनी भी भयावह क्यों न हों, मेरी करुणा कभी रुकने न पाए। मेरी विनम्रता कभी छूटे नहीं, मेरी श्रद्धा कभी टूटे नहीं।

कोई मेरा साथ दे या न दे, मैं अपना साथ कभी न छोड़ूं। मैं हार न मानूं, मैं दान न मांगूं। मैं अकेला भी चलूं, तो भी अपने पथ से विचलित न होऊं।

क्योंकि मुझे ज्ञात है कि मेरा मार्ग कठिन अवश्य हो सकता है, पर असंभव नहीं।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि मैं अवश्य जीतूंगा और जब तक विजय प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक रुकूंगा नहीं।

इस प्रकार आत्मविश्वास कोई एक वस्तु नहीं, यह एक संपूर्ण जीवन पद्धति है। इसमें तुम्हारा स्वास्थ्य सम्मिलित है, तुम्हारा जीवन के प्रति दृष्टिकोण सम्मिलित है और तुम्हारा आचरण भी सम्मिलित है। स्वयं को एक भवन के समान समझो। जिस भवन की नींव गहरी होती है, उसमें रहते हुए मनुष्य भयभीत नहीं होता। जिसके द्वार सुदृढ़ होते हैं, उस भवन में मनुष्य निश्चिंत होकर विश्राम करता है। जिसकी खिड़कियां सुरक्षित होती हैं, वहां रात्रि में सोते समय भय नहीं सताता। ठीक उसी प्रकार, जिस देह में तुम निवास कर रहे हो, उस पर विश्वास रखने के लिए उसके रूप, रंग, चाल ढाल, सज्जा और आचरण, इन सबका एक निश्चित मानदंड होना चाहिए। जब ये सारी बातें एक साथ मिल जाती हैं, तब स्वतः ही अपने ऊपर विश्वास जन्म लेता है, तब मन में यह भाव उठता है कि मैं यह कार्य कर सकता हूं, मैं कुछ भी कर सकता हूं।

और यह भाव तुम्हें बारम्बार स्वयं को स्मरण कराना है। ईश्वर तुम्हारे माता-पिता हैं, तो फिर भय किस बात का, दुर्बलता किस बात की। **आत्मविश्वास कोई बाहर से प्राप्त होने वाली वस्तु नहीं, यह भीतर से जागृत होने वाली चेतना है और जिस दिन यह चेतना जाग जाती है, उस दिन से जीवन की दिशा ही परिवर्तित हो जाती है।**